Reg No 177/2008-2009 ISSN: 2322–0317

PSSH PERSPECTIVE of SOCIAL SCIENCES and HUMANITIES

An International Multidisciplinary Refereed Research Journal

VOL 2, NO 2

JULY - DECEMBER 201

Biannual

Editor

Dr Hemant Kumar Singh

Assistant Professor

Economics Department

Madan Mohan Malviya PG College

Deoria (UP)

Publisher

Herambh Welfare Society

Varanasi (India)

अस्मिता और भाषा

वीना मीना

अस्मिता का आधार रूप संस्कृति होती है। भाषा वैज्ञानिकों द्वारा प्रदत्त भाषा की परिभाषाओं में इस संकल्पना की पुष्टि होती है। भाषा ध्वनि होती है एवं किसी सामाजिक समूह की परस्पर अंतः क्रिया ओर सहयोग का माध्यम भी। सामान्य व्यवहार में भाषा को सम्प्रेषणीयता का पर्याय समझा जाता है। शब्दों में स्थित प्रतीकात्मकता का पर्याय समझा जाता है। शब्दों में स्थित प्रतीकात्मकता सम्प्रेषण का आधार है। भाषा सहज स्नायविक नहीं होती। इसकी निर्मिति का रहस्य व्यक्ति के द्वारा उच्चरित रूपों की परम्परित अभिव्यक्ति तथा समाज के अन्य सदस्यों की उन्हें उसी परम्परित अर्थ में ग्रहण करने की स्वीकृति में निहित है। इसलिए भाषा को अर्जित और सांस्कृतिक कार्य कहा जाता है। मानवता का इतिहास एक सुगठित भाषा को प्रारंभ से ही आधार बनाकर चला है। ''मानव का अधिकार भाषा पर न होता तो वह विधि द्वारा निर्मित जीवन के इतने महत्त्वपूर्ण ध्येय की पूर्ति न कर पाता।''[1]

समाजों की स्थापना में भाषा का महत्त अन्यतम है। विचार की साधना और सहायक भावना ने ही मानव के स्वत्व को चेतना प्रदान की। मानवीय चेतना और संस्कृति का विकास भी प्रतीकात्मक ध्वनि अवस्था अर्थात् भाषा पर निर्भर है। मनुष्य की राजनैतिक, आर्थिक तथा सांस्कृतिक उन्नति उसके द्वारा किए गए आविष्कारों पर निर्भर होती है जिनका निर्माण तथा प्रसाद भाषा के माध्यम से ही संभव है।

भाषा के माध्यम से सीखने की प्रक्रिया को सरल बनाया जाता है और इस प्रकार जीवन की किसी विधि विशेष की निरन्तरता तथा परिवर्तनशीलता दोनों ही प्राप्त होती है। भाषा समाजीकरण की प्रक्रिया का आधार है। सामाजिक अंतःक्रियाओं को भाषा के द्वारा ही स्पष्ट तथा मूर्तरूप प्राप्त होता है।

भाषा सामाजिक एकीकरण के अभूतपूर्व साधन के रूप में कार्य करती है। किसी समाज में सदस्यों के संगठित करने तथा उनमें एकरूपता लाने के लिए कितनी ही अवस्थाओं का निर्माण क्यों न कर लिया जाए, पर भाषा जैसी एकता दूसरी संस्था में संभव नहीं। एक समाज में भाषा सभी व्यक्तियों को एक विशेष प्रकार के कार्य तथा व्यवहार करने को प्रोत्साहित करती है। इस तरह भाषा समानता की चेतना उत्पन्न करने का महत्त्वपूर्ण आधार है भाषा एक ऐसा माध्यम है जो जैविकीय प्राणी को मानवीय प्राणी में स्थान्तरित करती है।

सामाजिक नियंत्रण में भी भाषा की अहम भूमिका होती है सामाजिक नियंत्रण ही एक महत्त्वपूर्ण आवश्यकता 'भावनात्मक नियंत्रण' की पूर्ति भाषा के माध्यम से बखूबी होती है। यही भावनात्मक नियंत्रण व्यक्तियों में हम की भावना और एक राष्ट्र की भावना को परिपुष्ठ करती है। वस्तुतः भाषा के आधार पर सामाजिक एकीकरण का रूप प्रत्येक क्षेत्र में देखने को मिलता है। एकभाषा बोलने वाले व्यक्ति परस्पर मिलकर एक अन्तः समूह (ingroup) का निर्माण करते हैं।

भाषा केवल विचारों की अभिव्यक्ति का साधन मात्र नहीं है। बल्कि वह स्वयं में एक कथ्य भी है जो सामाजिक अस्मिता और द्वेष का कारण बनता है। वह पीढ़ियों से उपार्जित ज्ञान तथा रागात्मक संवेदनाओं की अन्तवर्ती पीढ़ियों को अंतरित करती है। ऐसा करने के क्रम में वह उस भाषिक समुदाय की आत्मिक संस्कृति और जातीय आत्मचेतना का निर्माण करती है। नई आत्मचेतना अस्तित्वगत रूप में अस्मिता का चोला धारण करती है। औपनिवेशिक शोषण एवं दमन के प्रतिरोध में यह अस्मिता जातीय जीवन को नया अर्थ प्रदान करती है। और सक्रिय रूप में उस जाति के सांस्कृतिक प्रतिमानों और आचरणों में अभिव्यक्ति पाती है। वे सांस्कृतिक प्रतिमान आत्मिक संस्कृति के अभिलक्षण होते हैं जिसे व्याख्यायित करते हुए 'बोरिस क्लूयेव' ने लिखा है– ''आत्मिक संस्कृति अपने में किसी भी मानव समष्टि की सामूहिक स्मृति में अस्तित्व मान उस सूचना को घोषित करती है जो पीढ़ी–दर–पीढ़ी वर्णन और प्रदर्शन द्वारा प्रेषित होती है। और आचरण के कुछ रूपों में निर्धारित होती है।''[2]

भाषा प्रकार्यातमक रूप से संप्रेषण एवं जातीय चेतना के निर्माण के रूप में दोहरी भूमिका का पालन करती है। मनुष्य अपने अनुभव अनुवर्ती पीढ़ियों को सौंपता है जो उसके लिए विरासत का आधार बन जाते हैं। मूल्यों का क्रमिक संचयन समय के साथ स्वयंसिद्ध सत्य का रूप ले लेते हैं। समय बीतने के साथ धीरे–धीरे वे जीवन पद्धति बन जाते हैं। यह जीवन पद्धति अन्य पद्धतियों से भिन्न होती हैं किसी भी जातीय समुदाय की विशिष्ट संस्कृति और इतिहास के निर्माण एवं विकास का यही आधार है। इस विशिष्ट संस्कृति में वे सभी नैतिक तथा सौन्यबोधक मूल्य समाहित होते हैं जिनके जरिए विश्व में हम अपने स्थान को निर्दिष्ट करते हैं। अपने स्थान और स्थिति की चेतना ही अस्मिता का निर्माण करती है। इसको स्पष्ट करते हुए न्गुगी ली थ्योंगे लिखते हैं– ''जनसमुदाय की अस्मिता और मानव समुदाय का सदस्य होने का विशिष्ट बोध ये मूल्य ही है और इन सारे मूल्यों के वाहक का काम भाषा करती है।''[3]

इस तरह मानव समुदाय की विशिष्टता का बोध पैदा करने के साथ भाषा अपने बोलने वाले समुदाय के चरित्र का प्रतिनिधित्व भी करती है।

डब्लू बोंन हम्बोल्ट ने लिखा है– ''भाषा ज्ञात तथ्यों की अभिव्यक्ति मात्र ही नहीं करती, बल्कि वह तथ्यों का आविष्कार भी करती है।''[4]

इस तरह कोई भी भाषा उस भाषिक समुदाय के मनोमस्तिष्क एवं चिन्तन प्रक्रिया को बर्हिजगत में प्रस्तुत करने का एक सशक्त अभिलक्षण है। स्वयं किसी भाषा का विकास, बर्हिजगत भाषा की प्रकृति जातीय भाषिक

समुदाय की विशिष्टताओं की अंतःक्रिया के फलस्वरूप होता है। इसलिए कोई भी व्यक्ति जो भाषा पहले सीखता है वह उसके लिए प्राकृतिक होती है। चिन्तन की परिकल्पना भी वह नहीं कर सकता। वैजामिन ली कोक्र के अनुसार– ''भाषा हमारे विचारों को अभिव्यक्ति ही नहीं देती बल्कि उन्हें रूपायित भी करती है।''[5]

आत्मिक संस्कृति के रूप में भाषा अपने भाषिक समुदाय की चेतना का निर्माण करती है। भाषा जनता की विशिष्ट सृजनात्मक क्रियाशीलता को प्रदर्शित करने के कारण किसी भी संस्कृति के सर्वाधिक जातीय तत्वों में से अन्यतम है। इसको स्पष्ट करते हुए रवीन्द्रनाथ श्री वास्तव लिखते हैं– ''भाषा मानसिक संकल्पना होने के साथ–साथ एक सामाजिक यथार्थ भी है। व्याकरणिक इकाई होने के साथ–साथ वह संस्थागत प्रतीक भी है और सम्प्रेषण का अन्यतम उपकरण होने के साथ वह हमारी सामाजिक अस्मिता का एक सशक्त माध्यम भी है।''[6]

स्पष्ट है कि भाषा और संस्कृति का घनिष्ठ संबंध है। बिना भाषा के संस्कृति गूंगी होती है और बिना संस्कृति के भाषा आत्महीन।

अतः शक्ति, वर्ग, समाज और राष्ट्र की अस्मिता का परिचय उनकी भाषा से सहज ही मिल जाता है। वस्तुतः भाषा व्यक्ति के व्यक्तित्व का उसी प्रकार से अंग होती है, जैसे उसके शारीरिक अंग, उसका मस्तिष्क, उसके भाव, विचार हौर चिन्तन। ये सब एक–दूसरे से भिन्न प्रतीत होते हुए भी अभिन्न हैं, इसलिए हमारी अस्मिता और भाषा भी एक दूसरे–से अभिन्न हैं।

संदर्भ सूची

1. हजारी प्रसाद द्विवेदी – 'ग्रंथावली : खण्ड 10' पृ. 229
2. जे. वान्द्रिएज भाषा हिन्दी समिति सूचना विभाग, लखनऊ, पृ. 13
3. बोरिस क्लूयेब, 'स्वतंत्र भारत जातीय एवं भाषाई समस्या', पीपुल्स पब्लिशिंग हाऊस, मास्को 1586, पृ. 301
4. लागी बाध्योंर्ग – भाषा संस्कृति और राष्ट्रीय अस्मिता : सारांशप्रकाशन, नई दिल्ली, 1994, पृ. 14
5. इफ्लूएंस ऑफ लेंगुएज ऑन कल्चर एंड थ्योंट, आउटन डी यूयटर, पृ. 14
6. इफ्लूएंस ऑफ लेंगुएज ऑन कल्चर एंड थ्योंट, आउटन डी यूयटर, पृ. 14